[Social Issues and Environmental Problems,Vol.3 (Iss.9:SE): Sep, 2015] ISSN- 2350-0530(O) ISSN- 2394-3629(P)
Impact Factor: 2.035 (I2OR)
DOI:https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v3.i9SE.2015.3254

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

विस्थापन, पुनर्वास एवं पर्यावरण

शशि जोशी
शासकीय माधव विज्ञान महाविद्यालय, उज्जैन

मनुष्य अपनी सुख समृद्धि, भोग एवं महत्वकांक्षाओं की पूर्ति हेतु जिस तरह प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरणीय तत्वों का अनियोजित एवं अनियन्त्रित प्रयोग कर रहा है, इस कारण पयावरणीय विघटन एवं असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। जल, वायु, भूमि, वन एवं खनिज संजीवनी का निरन्तर विघटन हो रहा है, जल स्त्रोत सूख रहे है, वातावरण विषाक्त हो रहा है और भूमि का क्षरण भी हो रहा है। वनों के विनाश से पर्यावरण ह्रास में वृद्धि हुई है। इन सबके के साथ ही एक अमानवीय सामाजिक समस्या उत्पन्न हुई है और वह है विस्थापन और पुनर्वास की समस्या। प्रकृति के नजदीक निवास कर रहे लोगों की व्यथा, आदिवासी जनजातियों के निवास की समस्या, उनके घरों के उजड़ने और बसने के बीच की अमानवीय यातना को झेलने की समस्या अभी तक अनसुनी है। इनकी व्यथा को व्यक्त करती बाबा आमटे की पँक्तियों दृष्टव्य है :–

''यह एक बावली आपदा है सर्वोच्च न्यायालय के फैसले से पैदा
भ्रष्ट और पूँजीवादी तंत्र है जो न्यास का
मात्र पुरोहिताई का पुनीत वेश पहने नहीं देता गारंटी
कि आदमी के हकों की हिफाजत हो
कि बचे रहें दीन–हीन आदिवासी''

नदियाँ हमारे देश की नाड़ियाँ हैं, जीवन है। इन पर बिजली उत्पादन एवं विकास के नाम पर बड़े–बड़े बाँध बनाए जा रहे हैं इससे बिजली की समस्या भी हमेशा के लिए समाप्त नहीं होगी। नदियों के जल को बाँध देने से वहाँ धीरे–धीरे गाद भरती जायेगी। जल सूख जायेगा, हमारे प्राकृतिक संसाधन जल को पाने के समाप्तप्राय हो जायेंगे। प्राकृतिक असंतुलन होगा। इससे कई शहर डूब में आ जायेंगे और वहाँ रहने और बसने वालों का दुःख अपने ही देश में, शहर में विस्थापितों जैसा होगा व होता भी है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में हरित क्रांति संभव बनाने के लिए कई बड़े बाँधों का निर्माण हुआ, जिसके कारण लाखों लोग विस्थापित किए गए। ये बाँध वहाँ के स्थानीय गरीब लोगों के शोषण कर ऐसी कीमत पर बनाए गए जिसमें व्यवस्था की मर्जी का प्रतिरोध करने की शक्ति नहीं थी। बात सिर्फ उन लोगों के शोषण की भी नहीं है, यह तो विश्व के जीवन की भी है। हम नदियों के स्वाभाविक प्रवाह से खिलवाड़ कर रहे हैं। कृषि भूमि भी उसी से सिंचित होती है। लोगों के पालन–पोषण का आधार नदियाँ है।

नदियों को वहाँ के स्थानीय लोग 'माँ' कहकर सम्बोधित करते हैं। बाँध उनकी 'आस्था' पर चोट है। संस्कृति को लुप्त हो जाने का भी खतरा है। नदियों के किनारे संस्कृतियों का मिलन होता है। ''सिंहस्थ' में नदियों के किनारे कई संस्कृतियों का मिलन होता है उस एकता पर कुठाराघात है। 2 जुलाई को दैनिक भास्कर में श्री राम परिहार ने लिखा – ''हरसूद डूबने का अर्थ मात्र मकान, दुकान, घर, गली, आँगन, लकड़ी, ईंट डूबने का नहीं है। इन सबका तो मुआवजा मिल चुका है। असली सवाल तो हरसूद की सांस्कृतिक धरोहर के डूबने का है।'' इसके खिलाफ मेधा पाटकर का 'नर्मदा बचाओं आंदोलन' भी चला। कई बुद्धिजीवियों ने शिरकत भी की। बाबा आमटे, स्वामी अग्निवेश, शबाना आजमी, अंरून्धती रॉय ने भी भाग लिया। किन्तु नर्मदा के प्रवाह को बाँध दिया गया। 'हरसूद' डूब के क्षेत्र में आ ही गया। कई लोग विस्थापित हो गये। इसे विजय मनोहर तिवारी ने मानवजनित आपदा बताया। अपनी पुस्तक 'हरसूद 30 जून' में उन्होंने लिखा ''आपको बखूबी याद होगा कि जब गुजरात और लातूर में भूकम्प आया था तो हर प्रदेश और हर शहर में लोग दवाइयाँ, कपड़े

और पैसा खुले हाथ से दान देते नजर आ रहे थे। हर कोई गुजरात की त्रासदी के वक्त हजारों पीड़ितों के साथ था। कई संगठनों के कार्यकर्ता भूकम्प पीड़ितों की मदद के लिए बिना बुलाए गुजरात दौड़े गए। वह एक भीषण प्राकृतिक आपदा थी। हरसूद में एक ऐसी मानवजनित आपदा आई थी, जिसे किसी रिएक्टर स्केल से मापा नहीं जा सकता। गुजरात में तो कुछ सेकण्डों में सब खत्म हो गया किन्तु हरसूद में लोग हर पल मौत को करीब आता हुआ देख रहे थे। वे एक भी क्षण वर्तमान से अनिश्चित भविष्य की तरफ धकेले जा रहे थे। जहाँ कल कैसा होगा। ऐसी विकट मुसीबत में मानवीयता नदारद थी।'' जब मुसीबत आती है तो हर तरफ से लूट, खसोट, मकान मालिक, चोर–उचक्के भी हाथ आजमाते हैं। ताबड़तोड़ विस्थापन में मानवाधिकारों का भी खूब उल्लंघन होता है।

हरसूद की विभिन्न शालाओं में लगभग 6000 बच्चे विस्थापन पीड़ित होकर पढ़ाई छोड़ने को मजबूर हो गये। व्यवसायियों को व्यवसाय छोड़ देना पड़ा। भूमि का जो लेन–देन हुआ, उसमें भी भ्रष्टाचार किया गया। इस भ्रष्टाचार का जिक्र करते हुए विजय मनोहर तिवारी ने लिखा– ''हरसूदवालों के साथ मुआवजा निवारण, आवासीय भूखण्ड, आवंटन आदि में अधिकारियों ने चरम सीमा पर भ्रष्टाचार किया है।

इंदिरासागर परियोजना में डूबने वाला हरसूद अब तक का सबसे बड़ा शहर था, जो इस तरह की योजनाओं के कारण समाप्त हो गया। जो नया हरसूद बना उसमें कई लोगों की आँखों में आँसू थे। अपनी जड़ों से उखड़ने का दुःख था। वे अपने ही लोगों द्वारा सताये गये थे। उत्तरांचल में बाहरी हिमालय क्षेत्र का टेहरी बाँध निर्माण की 1972 में स्वीकृति मिली तभी से वैज्ञानिकों, पर्यावरणियों ने इसका विरोध किया। जमीन पर असंतुलन स्थापित होने के कारण उत्तरांचल की त्रासदी घट चुकी है।

पुनर्वास के लिए वैकल्पिक भूमि चाहिए। हमारे भारी आबादी वाले देश में खेती योग्य उम्दा भूमि आसानी से उपलब्ध नहीं है। इसलिए अधिकांश प्रभावित व्यक्तियों को बिना काम की बंजर जमीनें दे दी जाती है।

बाँध बनने के कारण नदियों में बाढ़ आती है। मकान, घर इत्यादि भी तबाह हो जाते है। केदारनाथ त्रासदी में कई लोग मौत की गोद में सो गये। बड़ी–बड़ी त्रासदी भी पर्यावरण के प्रति हमारी जागरूकता को नहीं बढ़ा पा रही है।

जब–जब त्रासदी घटित होती है ये ज्वलंत प्रश्न हमारे समक्ष छोड़ जाती है कि हम अपने विकास की खातिर कितनी कीमत चुकाने के लिए तैयार है। हम अपने पिछड़पन या विकास से जुड़ी समस्याओं के तात्कालिक हल चाहते हैं या दूरगामी समाधान खोजने में हमारी दिलचस्पी है। क्या हमारे सत्ताधारी सूरमा जनहित के लिये निःस्वार्थ एकजुट होकर फैसले ले सकेंगे। प्रकृति के दोहन का तांडव नृत्य कभी थमेगा या नहीं। महत्वकांक्षाओं की वेदी पर कितने निर्दोष लोगों की बलि चढ़ेगी।

यह नारा दिया जाता है कि विस्थापन ही विकास है। नारों से कभी विकास नहीं होता। नारों के खोजी लोगों का उन नारों के अर्थ संसार की प्रत्यक्ष अनुभव सम्पदा से कितना गहरा रिश्ता है। विस्थापन ही विकास है। यह नारा ही मूलतः गलत है। विस्थापन से भौतिक जगत तो विकसित हो जायेगा किन्तु सांस्कृतिक सृष्टि ध्वस्त हो जायेगी। प्रकृति पर निर्भर जनजातियाँ तथा लोगों के साथ हमेशा अन्याय होगा। स्वयं प्रकृति के साथ भी अन्याय होगा।

पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व आयोग के ब्रंटलैण्ड प्रतिवेदन में दी गई स्थिर अथवा टिकाऊ अथवा धारणीय विकास की परिभाषा इस प्रकार है – ''धारणीय अथवा टिकाऊ विकास वह है, जो भावी पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरी करने की क्षमता को क्षति पहुँचाए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकता को पूरा करे।'' यदि अब भी हम प्राकृतिक संसाधनों का ऐसा दुरूपयोग करते रहे तो मानव जाति का अंत भी निश्चित है। नदियों के प्रवाह के साथ हमने खिलवाड़ किया तो मानव जाति भी एक दिन डूब में आयेगी।

संदर्भ

1. *पहल –अंक 70 सं. ज्ञानरंजन*
2. *हरसूद– 30 जून विजय मनोहर तिवारी*
3. *पर्यावरण अध्ययन– इराक भरूचा*
4. *विकास और पर्यावरण का अर्थशास्त्र– डॉ. जे.पी. मिश्रा*
5. *विकास और पर्यावरण का अर्थशास्त्र– प्रो. रामप्रसाद गुप्ता, डॉ. गणेश कावड़िया, डॉ. सारा अत्तारी*